भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली द्विमासिक सत्संग पत्रिका

वर्ष 20 अंक : 11	सम्पादक : **प्रभाकर राव**	वार्षिक चंदा : 50.00
बुधवार, 26.11.97	नवम्बर, 1997	प्रति अंक : 5.00

ब्रह्मप्रवाह

पहचाना हो यदि जिसने स्वामिजी (गुरुहरि योगीजी महाराज) को!

हम प्रगट गुरुश्री के उपासक कहलाते हैं।
ढोल बजा-बजा कर
हम पूज्य स्वामिश्री की
स्वयं भगवान सरीखी महिमा गाते हैं।
हमने मान लिया है कि–
हम एकदम ठीक-सही प्रकार से प्रगट का भजन कर रहे हैं,
सेवा कर रहे हैं,
इनके पीछे शरीर को घिस दिया है,
सो हमारा तो कल्याण हो चुका है।
लेकिन हकीकत में क्या नज़र आता है?
आगे एक का अंक ही अभी तो लगा नहीं है !
एक के अंक के बिना ही ज़ीरो लगाते जा रहे हैं।
और.........खुश होकर
हमारे व्यवहार में व विषयतृप्ति में मशगूल हो जाते हैं
और
थोड़ा-सा दुःख आने पर पू. बापा के सिर पर थोप देते हैं।
फिर उनकी कृपादृष्टि, आशिष कहाँ से फलेगी?
उन्हें तो रक्षा करनी ही है,
वही तो उनका मूल स्वभाव है।
लेकिन, कद्रहीन हम ही
उनकी महिमा सही अर्थ में ना समझ कर
ऊपर-ऊपर से ही – स्थूल इंद्रियों से ही उन्हें निहार कर
खुद से धोखाधड़ी करते रहते हैं।
जब तक हमारे जीव में
पू. स्वामिश्री की मर्जी में रहने की लगन–
डूबते हुए व्यक्ति की गरज जैसी लगती नहीं,
तब तक प्रगट का सुख भी अनुभव नहीं हो पायेगा
और
कृपा या आशिष या वचन भी फलेंगे नहीं।
अमृत परावाणी तो राजा या दीन, बड़े या छोटे सभी के लिए है।
लेकिन उनके वचन
धधकते लोहे पर पानी गिरे
या
रेगिस्तान में छींटे पड़े
या
पत्थरों पर से पानी बहे
और
वह उड़ जाता है–टिकता नहीं,
यूं ही हमारे देश के सत्संगियों में चल रहा है।
बरसात तो सभी जगह एक जैसी ही है।
लेकिन
कालु नाम की मछली के मुँह में
एक बूंद पड़ते ही मोती हो जाता है,
वैसा हम में से कहे जाते बड़ों में
व
ऊँची-ऊँची आवाज़ से चिल्ला-चिल्ला कर भजन करते हों उनमें भी
वह ज़रा भी नहीं दिखाई पड़ता।
हमने स्वामिजी को सच में पहचाना है?
लेखा-जोखा निकालें; भीतर में टटोलेंगे तो
जरुर जवाब मिल जाएगा।

पू. स्वामिजी को सच में पहचान कर,
अक्षरपुरुषोत्तम की प्रगट की उपासना पक्की करके
हम जीतेजी ही ब्रह्मभाव को पाएँ तभी
उन्हें सच में शांति होगी।
वर्ना, वे हैं तो अति दयालु,
सो– हमारे करोड़ों गुनाह माफ करते हैं,
रक्षा करते हैं,
चौरासी योनियों के नरक से–
केवल दर्शन के प्रताप से ही उबार लेते हैं।
तब भी हमारे अंतर्चक्षु अब भी नहीं खुले !
समुन्दर के अंदर-तल में जायेंगे
तभी मोती मिलते हैं,
किनारे पर खड़े-खड़े नहीं !
सो,
हमारे अपने ख्याल, भ्रम और कुसंगीभाव के कारण
अजागृत चित्तपट्टी पर पड़ी हुई रुढ़ि दूर करके
हम भीतर में ढूंढ कर लेखा-जोखा निकालें,
और
अन्य सत्संगियों को भी
इसी आंतरिक शुद्धि के मार्ग पर अग्रसर करें।
तो, पू. स्वामिजी जरुर स्वस्थ हो ही जाएंगे,
क्योंकि उनको तो यही दुःख है
और
सच्चे भक्त–वही उनका जीवन है, प्राण है।
फिर हमें धोखा देकर
प्रगट का सुख देना बंद कर देना उनके बस का नहीं।
सो, निम्न प्रश्नों पर विचार देकर
जितना जल्दी हल निकालेंगे,
उतनी हमारी शुद्धि
और
तभी उन्हें पहचाना कहा जाए।
वर्ना, हमारी सारी बातें दिखावे की ही रही
और
धोखाधड़ी करते हुए ही गिने जाएंगे।
हम से तो अफ्रीका के सत्संगी और यहां की विधवाएँ
हम से आगे निकल गई हैं।
सो, अब कुछ सोचें
और
पू. स्वामिजी के पास निष्कपटभाव से
भीतर की दूरी रखे बिना वर्तें,
तो अक्षरधाम यहीं घर-घर में हो जाएगा।
यही तो प्रगट की महिमा और सत्ता का सबूत है।

मुख्य बातेंः–

हमने लिखाई चंदे की रकम दे दी है?
हम पू. बापा को सर्वज्ञ अंतर्यामी मानकर
दसवां या बीसवां भाग सच्चाई से–नेकी से देते हैं?
हमारे पवित्र मंदिरों की आय, आमदनी ठीक से संभालते हैं?
हमारे मंदिर को स्वच्छ व निर्मल भावनाओं से भरा-भरा रखते हैं?
खाने-सोने और हमारी सुविधा हेतु
हम हमारी जाति, वर्ण-कुल के अभिमान को आगे कर के लड़ते हैं क्या?
या प्रगट प्रभु के पास
शुद्ध हृदय से केवल आत्यंतिक कल्याण के लिए ही जाते हैं?
हम नियम, आज्ञा और उपासना में दृढ़ हैं क्या?
यदि गल्तियाँ हो जाएं, नियम-मर्यादा टूट जायें तो
प्रभु के पास माफी मांग कर
हमारा बर्ताव बदल देते हैं क्या?
हमें मान, क्रोध, ईर्ष्या, बराबरी का भाव
और
कुसंग के शब्द छू जाते हैं क्या?
अपने आपको प्रगट के भक्त बताते तो हैं,
पर पू. बापा की मर्जी के मुताबिक वर्तते हैं क्या?
उनके कहे मुताबिक तन, मन, धन से मंदिर में–
जहां से अक्षरपुरुषोत्तम की उपासना की विजयध्वनि बजाने का
हमारे स्वामी ने तय किया है,
वहां फंड में–सेवा में निष्कपटभाव से सर्वस्व लुटाया है?
या
एहसान जताने की मानवृत्ति और बड़प्पन में खींचे गये हैं?

सच में ही पू. स्वामिजी को पहचाना हो तो–
ऊपर की सारी बातें होंगी ही नहीं।
सो–प्रगट अक्षरधाम यहीं है,
धामी और मुक्त भी हैं।
इस विनती के बाद यही देखना है कि–
वे कहाँ हैं? कब चमकेंगे?
यह तो अमृत का सागर है।
जितना लूट सकते हो, लूट लो।
बाकी लुकाछिपी में तो रह जाओगे।
बाद में पत्थर पर सिर कूटना पड़ेगा।
तो, सभी सत्संगी तन, मन, धन सर्वस्व से–
अपनी गुंजाईश में पू. स्वामिजी की मर्जी के मुताबिक ही वर्तें
और
चली आ रही जिम्मेदारियों से उन्हें तत्काल मुक्त करें।
तब तक उनकी कृपा नहीं ही होगी–यह मेरा स्वानुभव है।

–प. पू. काकाजी महाराज
दिसम्बर, 1960

✡ ✡ ✡ ✡ ✡

अनिर्देश की गतिविधियाँ

'ग्वाल-बाल-थाल जमे मदन गोपाल.....'

प. भ. ऋषि, प.भ. आशिष, प.भ. निर्दोष, प.भ. सागर, प.भ. टीटु, प. भ. गौरु, प. भ. उनीत वगैरह द्वारा करीब दस दिनों से दिन-रात जग कर थर्माकोल की छोटी-छोटी कलात्मक कटिंग कर-कर के **'अन्नकूटोत्सव'** के लिए बनाया प्रवेश द्वार नूतन वर्ष –1 नवम्बर की सुबह आते जाते हर एक को अपनी ओर सहज ही आकर्षित कर रहा था। दूर से देखने पर वो सामान्य लकड़ी से बना हुआ ना लगकर संगेमर्मर की विशेष कारीगरी किया लग रहा था। उस पर लिखा भगवान स्वामिनारायण का वरदान–

'प्रभु के आश्रय का लेशमात्र बल भी बड़े से बड़े कष्ट से उबार लेता है।'

सभी के भीतर एक ठंडक दे रहा था। साथ ही अनिर्देश के प्रांगण में प्रवेश करते ही एक स्तंभ पर घूमता अक्षरपुरुषोत्तम का गोल कटआऊट सभी का अभिनंदन कर रहा था।

सुबह करीब 10.30 पर प. पू. गुरुजी के सान्निध्य में नये वर्ष निमित्त सभा का आरंभ हुआ। लुधियाना, जगरांव, मोगा के अलावा इस बार मुंबई, अमदावाद, राजकोट, वापी, अमृतसर से भी कई हरिभक्त खास नए वर्ष के मंगल प्रारंभ में 'अन्नकूटोत्सव' के दर्शन के लिए आए थे। प.भ. राकेशभाई, प.भ. ऋषि ने भजन गाए....प.भ. कानजीभाई (राजकोट),प.भ. वच्छराजभाई, प.भ. कालियाजी (अमृतसर) ने प्रासंगिक उद्‌बोधन किया और प.पू. गुरुजी ने आशिष प्रदान करते हुए साधना की निचोड़रुप बातें करीं कि-

.....अन्नकूट उत्सव हमारे लिए एक फेमिली गेट-टू-गॅधर-'पारिवारिक सम्मेलन' है। सबसे पहले अरविन्द महेता सेठ को खूब-खूब धन्यवाद ! क्योंकि आज का सारा अन्नकूट उन्हीं की ओर से है।

दूसरी बात, गुणातीतभाव में अखंड रहते पुरुष की मूर्ति का चिंतवन और स्वामिनारायण मंत्र का जाप करके जो कुछ भी करेंगे वो रामबाण होगा-निशान हल करके ही आयेगा। ऐसे संत के साथ-ऐसी प्रभुस्वरुप विभूति के साथ हम अनन्यभाव से जुड़े रहेंगे-'प्रभु हम तुम्हारे-आप हमारे'-जैसे राधा का, अर्जुन का, हनुमान का, मीरां का संबंध था। यूं विश्वास से, प्रीति से, समझदारी से संबंध हो, उससे हमारी हर पल रक्षा होती ही रहेगी। बेस्ट प्रोटेक्शन यही है कि कोई भी काम करें-हमारे प्रभु को याद करके स्वामिनारायण-स्वामिनारायण.....करके ही करें।

वचनामृत लोया-10 में महाराज ने कहा–एक तो ज्ञानी-यानि जिसे सत्-असत् का विवेक हो वह सुखी है। सत्-असत् का विवेक क्या? धाम, धामी और मुक्त सत्य-बाकी सब असत्य ! जब किसी के खोटेपन का ख्याल पड़ जाता है, तो फिर उसे संभालने की हम ज़रा-भी कोशिश नहीं करते.....खोटे सिक्के को हम संभालेंगे क्या? यूं सही मायने में जिसने 'ब्रह्म सत्य और जगत् मिथ्या'-यह बात समझी होगी वो भगवान, संत और सत्संगी के अलावा और किसी में दिलचस्पी रखेगा ही नहीं। उसे और कोई विशेषता-महत्ता रहेगी ही नहीं। प.पू.पप्पाजी के मुंह से भी कई बार सुना होगा-धाम,धामी और मुक्त सत्य ! प.पू.काकाजी, प.पू. पप्पाजी ने सिर्फ ये बातें बोली ही नहीं, बल्कि यह मानकर जीवन जिया है.....प.पू. पप्पाजी के भक्ति उत्सव में हमने देखा होगा कि-कोई उद्‌घाटन या अध्यक्षता या अतिथि विशेष के रूप में कोई सामाजिक या राजकीय व्यक्ति विशेष नहीं था।

हाँ, संत यदि ऐसे किसी के साथ संबंध रखेगा भी तो वह सिर्फ जीवलक्षी ही होगा। जैसे शास्त्रीजी महाराज ने नंदाजी के साथ.....प.पू.काकाजी ने एच.के.एल.भगत साहेब के साथ रखा.....

वच.लोया-10 की में बात कर रहा था कि एक तो ज्ञानी सुखी है या दूसरा जो यूं समझे कि ये साधु और भगवान जो बात कर रहे हैं वो बात सच में यूं ही है-यूं मानकर उसे स्वीकार कर जो चलने लग पड़ेगा वो सुखी रहेगा। तो, आज नए साल पर हमें एक ही बात रखनी है कि हम कुछ भी करें प्रभु के नाम का नमक डालकर ही करें..... खाना चाहे कितना भी अच्छा क्यों ना बना हो, पर उसमें नमक नहीं होगा तो? इसी तरह कोई भी काम करेंगे, शायद वो कामयाब भी लगेगा, लेकिन फलश्रुति की जो मिठास मिलनी चाहिए, वो नहीं मिलेगी। आप आजमा कर देखना-प्रभु के नाम का नमक डालकर करा कोई भी काम-फिर वह सोशियल हो, रिलीजीयस हो, व्यावहारिक हो, इवन पोलिटीकल हो.....काम में कामयाबी तो मिलेगी ही, साथ ही उसकी मिठास भी आयेगी.....'

यूं पूरे साल का आध्यात्मिक राशन प.पू. गुरुजी ने भक्तों की चेतना के लिए भर कर दिया।

सभा के पश्चात् सभी ठाकुरजी के हॉल में आरती के लिए इकट्ठे हुए.....संतमंडल एवं प.भ. राकेशभाई व प.भ. ऋषि वगैरह ने थाल गाकर भावपूर्ण व्यंजनों का भोग लगाकर ठाकुरजी की आरती करी व अन्य भक्तों ने अन्नकूट आरती के अच्छी तरह दर्शन करे। आरती के पश्चात् सभी पार्क में कढ़ी, चावल, सब्जी का प्रसाद लेने गए.....

उसी समय एक आश्चर्य की घटना यह बनी कि सुबह की सभा में ही प.पू. गुरुजी ने प.पू. काकाजी के साथ प.भ. एच.के.एल. भगत साहेब के संबंध की बात करी थी और करीब 1.30 बजे ही प.भ. भगत साहेब अन्नकूट के दर्शन करने मंदिर आए....बहुत भावपूर्ण हृदय से उन्होंने अन्नकूट के दर्शन किए। यूं प.पू. काकाजी ने प.पू. गुरुजी द्वारा करी बात की सच्चाई की सचोट प्रतीति सभी को करवाई.....

फिर हर साल की तरह करीब 3.30 पर ठाकुरजी को लगा महाभोग उठाना शुरु किया.....हरिभक्तों ने उसमें से थोड़ा-थोड़ा प्रसाद लिया और फिर शुरु हुई बर्तन धोने की सेवा ! सेवा के साथ-साथ हरिभक्तों ने प.पू. गुरुजी के सान्निध्य में आनंद-किल्लोल करना शुरु किया.....जैसे कि सुबह की सभा में ही प.पू. गुरुजी बोले थे कि अपना अन्नकूट उत्सव यानि 'पारिवारिक सम्मेलन'.....यूं ही एक आत्मीय परिवार आनंद मस्ती में झूम रहा था। मुंबई, अमदावाद, वापी, पंजाब आदि के हरिभक्तों ने पहली बार ही ऐसे माहौल के दर्शन किये और फिर नए साल का दिन था ! गरबे, भांगडे आदि करके सब बहुत नाचे। एक दिव्य परिवार का-कुछ अनोखे ही सुख का सभी को भीतर में अनुभव हुआ.....प.पू. गुरुजी ने भी भक्तों के साथ एकदम कॉमन लेवल पर आकर कई स्मृतियाँ दीं। शायद इसी कारण अब की बार अन्नकूट के उत्सव से वापिस होते बाहर से आये सभी की आँखें नम थीं कि ओहो ! प.पू. गुरुजी के रुप में हमें कैसी विभूति मिली है.....

✡✡✡✡✡

'श्रवण, मनन और निदिध्यासन'

- महिमा से करी हुई सेवा ही हमारे भीतर का रुपांतर करेगी...
- प. पू. काकाजी के भाव से हरिभक्तों की सेवा करेंगे उसका फल अलग आयेगा। प. पू. काकाजी के भाव से ही भजन करते-करते हरिभक्तों के कपड़े धोयेंगे, कपड़ों पर साबुन लगायेंगे तो वो साबुन हमारे अंतःकरण पर लगता जायेगा... भीतर का मैल साफ होता जायेगा।
- सेवा की दौड़ लगनी चाहिए, सेवा लूटनी पड़ती है....अपने भीतर में महिमा होगी तभी हम सेवा लूटने दौड़ेंगे।
- ज़रा-भी किसी की तारीफ हो, तो हमें भीतर में क्षोभ हो जाता है, डिस्टर्ब हो जाते हैं, मायूस हो जाते हैं.....वो बराबरीभाव है। यह रख रखेंगे तो हमारी प्रगति नहीं होगी।
- हम अपने भीतर में टटोलेa कि पन्द्रह-पन्द्रह साल से सत्संग करते रहने के बावजूद हम अभी भी कहीं उसी चौराहे पर तो नहीं खड़े?
- बापा को याद करके हर एक क्रिया करेंगे....फिर कोई भूल भी होगी तो वो हमारे चैतन्य के विकास के लिए ही होगी।
- प.पू. काकाजी हमेशा कहा करते कि-
  'बापा हाज़राहजूर हैं, वे प्रगट ही हैं। पर, हमें उन्हें प्रत्यक्ष करना है। अब वह दिव्य शक्ति का उपयोग करते जाना है। स्वरुपों के गुण व महिमा याद करके नौकार मंत्र छूट से इस्तेमाल करो.....अनुभव तो करो'!
- अब हम बौद्धिक मूल्यांकन छोड़कर हायर कॉन्सियसनेस में एन्ट्री नहीं लेंगे तो-आगे जो नया समाज आयेगा-जो हायर कॉन्सियसनेस में रहता होगा वो हमारा ऐसा वर्ताव देखकर हम पर दया खायेगा कि ओहो ! इतनी भव्य प्राप्ति होने के बावजूद भी ये लोग यूं ही दिमाग की झंझटों में सड़ते रहते हैं.....
- 1966-67 से प.पू. काकाजी कहते रहते कि बापा के साथ दिव्यरुप से संबंध कर लो। हम प्रत्यक्ष स्वरुप के साथ स्थूलभाव से संबंध रखते हैं कि संत हमारे घर आएं, हम उन्हें जलपान करायें, नाश्ता करायें, खाना खिलाएँ। पर, वो संबंध नहीं.....उन्हें हर पल प्रत्यक्ष मान कर उनकी कॉन्सियसनेस में जीना-वो संबंध है !
- गुणबुद्धि के सत्संग में से अब हम आत्मबुद्धि वाले हो जायें। उसमें एन्ट्री कर जायें। गुणबुद्धि का सत्संग यानि क्या? जब तक साधु हमारे मन-बुद्धि के मुताबिक चले, हमारी माने, हमारी आईडियालिज़म के ढाँचे में फिट रहे तब तक ठीक है-साधु अच्छे हैं.....हमारे मन के हिसाब से तनिक भी इधर-उधर हुई लगी-तो वहां हम पंक्चर हो जायेंगे.....
- परोक्ष की उपासना मुश्किल नहीं है, क्योंकि मूर्तियाँ कभी कुछ बोलती नहीं.....जबकि प्रगट की उपासना कलेजा फाड़ने जैसी बात है। आज राधा-कृष्ण के संबंध को हम कितनी महिमा से, कितने भक्तिभाव से देखते हैं? लेकिन जब वे मानवस्वरुप में मौजूद होंगे तब किसी ने उस संबंध की सराहना करी होगी क्या? वह समाज उनके संबंध को स्वीकार कर पाया होगा क्या ?
- प्रगट की उपासना की बात ही अलग है। हमें जो मिला है वह प्रभु का ही स्वरुप मिला है-उसके पास हमारी कोई ईज़म, कोई आदर्श-मान्यता रहे ही नहीं.....अर्जुन ने कृष्ण के पास ऐसा रखा.....
- कोई वृत्ति परेशान करती हो, कोई स्वभाव नहीं टलते हों तो उसके लिए हम भजन करने लग पड़ें। लेकिन, हम वह करते नहीं हैं, क्योंकि हमें उस वृत्ति में स्वाद आता है या फिर हमें भरोसा नहीं है कि यह एक अजमाने जैसी

बात है। और कुछ नहीं करना-बस, 'स्वामिनारायण-स्वामिनारायण.....' हम रोज़ प्रार्थना करते रहें कि हे महाराज ! मेरे से नहीं होता.....मेरे से सुहृद्भाव नहीं रखा जाता, पर मुझे रखना है। महाराज आप करा दो-आप करा दो.....! तो, कामिल-कासिब सब हुन्नर तेरे हाथ, ऐसे वे हैं-सारी एडजेस्टमेन्ट वो कर देंगे, हमें तो सिर्फ दिल की सच्चाई से उनसे माँगना है।

- हम प्रभु के लड़के, प्रभु ने हमें गोद में बिठाया और हम ये पंचविषय की भीख मांगते फिरते रहें.....अ र् र्.....
- **एकता, मैत्री, सिम्पलीसिटी (सादगी) हम में कोई देखेगा तो वह समझ ही लेगा कि ये काकाजी के हैं। पर, बड़ी-बड़ी कोस्टली (महंगी) चीज़ें वगैरह में घिरे रहकर हमें मान-मर्तबों में झूलते हुए कोई देखेगा तो वह जरुर सोचेगा कि ये काकाजी के नहीं लगते।**
- कोई भी घटना बने, तब भजन का ही उपाय लेता जो दिखाई दे-उसे निष्ठावान मानना।
- प.पू. काकाजी कहते-दो मिल कर करो, बापा की शक्ति प्रगट हो जायेगी-काम करेगी.....26 जनवरी, 1986 के आखिरी प्रवचन में हम सब के लिए वे मैग्नाकार्टा दे गये.....कोई भी महत्व का डिसीज़न (निर्णय) लेना हो तो हम दो-तीन जने मिल कर पक्का करें। लेकिन वो बात हम भूल गये-भूल तो नहीं गये, पर हमें वो चीज़ पसंद नहीं आई। सो नज़रअंदाज करते रहे हैं। अकेले अगर डिसीज़न (निर्णय) लेते हैं तो समझना स्पीरीच्युअली हम फेल हो रहे हैं। प. पू. काकाजी ने यह बात सिर्फ उपदेश के तौर पर नहीं रखी थी, बल्कि उन्होंने खुद ऐसा जिया है। ताड़देव में वे खुद हर एक चीज़ पू. कांतिकाका से सलाह-मशवरा करके ही करते। खाली नारे लगाने या कहने मात्र की उनकी बातें नहीं थीa। उनका वैसा जीवन हमने देखा है, तो आज हमें वे बातें टच कर रही हैं।
- अपनी मेढ़क बुद्धि छोड़कर, उनकी बातों का भरोसा रख कर, अपना छोड़कर वो जो कहें बस वही करते जाना यही सच्ची इन्टेलीजेन्स (बुद्धिमत्ता) है। वर्ना, सारी जिंदगी दलीलें करते रहेंगे और कुछ भी नहीं पायेंगे।

(क्रमशः)

✡✡✡✡✡

स्वामी की बातें

586. इस सत्संग में तो सुख है। धर्म, भक्ति, ज्ञान तथा वैराग्य जो-जो सुकृत हैं, वे सभी इस सत्संग में हैं और सब ठिकाने तो आग है तथा खुद तो पशु जैसा हो-बोलने की भी तमीज़ ना हो व ज़रा-सा विवेक भी ना हो, फिर भी दूसरों का अवगुण-दोष लेते हैं। यूं कुसंग के जोग से सत्संग को घिसाई लगती है। सो, कुसंग नहीं ही रखना।

प्र-6,12

587. परिस्थिति वगैरह-आठ शुभ और अशुभ होते हैं। वह पहचान लेने चाहिएं। जहाँ ये संत रहते हों उतना देश शुभ है और बाकी तो अशुभ-अरबस्तान और मकराना आदि कई जगह हैं। काल शुभ हो तो भगवान भजे जा सकते हैं और सुखी रह पाए तो वह शुभ। जैसा काल हो वैसी मृत्यु होती है। देखो ना, जहाज डूबता है-तो दो सौ जने एक साथ डूब मरते हैं और सूरत शहर जला तब उसमें कई व्यक्ति जल कर मर गए ! वह सब की मृत्यु एक साथ ही लिखी हुई थी क्या? ऐसा होने पर तो अशुभ काल का प्रभाव ही मानना।

प्र-6,13

588. काम, क्रोध, मान, ईर्ष्या व देहाभिमान ये सब छोड़ेंगे तभी भगवान और भगवान के साधु राजी होंगे।

प्र-6,14

589. यह देह धरी है सो, भगवान भज लेना। भरतखंड में मनुष्य देह कोई थोड़े पुण्य से नहीं मिलती, देवता भी मानव देह पाने के लिए तरसते हैं। वह हमें मिली और इससे भी अधिक भगवान और भगवान के संत मिले यह कोई थोड़ी प्राप्ति नहीं हुई है। सोचना, दस या बीस लाख रुपये होंगे, पर वो साथ में नहीं जाएंगे और ज्यादा पैसे वाले भी एक सेर से अधिक तो खा नहीं पाते तथा जिसके पास रुपये अधिक नहीं हैं वह भी खाना उतना ही खा पाता है। सो, जितनी जरुरत-जितना काम आए उतना ही कमाना, वही ठीक है।

प्र-6,16

590. हमें जो लाभ मिला है उस बारे तो कुछ कहा ही नहीं जा सकता ! सो, उसे अब संभाल रखना।

प्र-6,17

591. एक दिन वचनामृत पढ़वा कर कहा कि यह वचनामृत की पुस्तक में तो चार वेद, षट्शास्त्र और अट्ठारह पुराणों का निचोड़ है। महाराज ने इसमें सिद्धांत की बात करी है। उसका अभ्यास करना। अहो ! हमें तो कोई लाभ हुआ है ! सोचना, भगवान दया करके कितनी दूर से हमारे लिए आए हैं। फिर भी, जीव को तो कोई गरज नहीं। ये तो सीधे अक्षरधाम से आए हैं और उस

स्त्री को जैसे जबरदस्ती सती करी, यूं इस जीव को भी जबरदस्ती भगवान भजवाते हैं। शास्त्र भी धर्म, अर्थ और काम के उपलक्ष्य में ही हैं। मोक्ष के लिए तो कोई इक्का-दुक्का श्लोक है। सो, मोक्ष के काम में आए ऐसा ग्रहण करना और अन्य जगह तो मंदिर में भी पाप होते हैं व चारों ओर पाप है। सिर्फ एक सत्संग में ही कल्याण है, पर और किसी जगह कहीं कल्याण नहीं है.....

प्र-6,19

992. आत्मा महा तेजोमय है और स्थूल, सूक्ष्म व कारण इन तीनों से देह को अलग मानकर यूं मानना कि मैं अक्षर हूँ और मुझमें ये प्रत्यक्ष पुरुषोत्तम भगवान सदा विराजमान हैं। विशैल्यकरणी के वचनामृत में यह सारी बात कही है; शायद ही कोई बात बाकी होगी। वह आत्मा का मनन द्वारा संग किया करना कि मैं आत्मा हूँ, अक्षर हूँ। यदि यूं निरन्तर किया करे तो वह अक्षरभाव को पा जाता है। उस पर दृष्टांत दिया कि एक जमादार के लड़के को पूछा कि तू कौन है? तब उसने कहा मैं जमादार हूँ। तो महाराज ने उसे दस बार बुलवाया कि बोल-'मैं आत्मा हूँ'। वह लड़का दस बार यूं बोला। पर, जब दोबारा उसे पूछा कि तू कौन है? तो बोला कि मैं जमादार हूँ। तब महाराज ने कहा कि अब सौ बार बोल कि मैं आत्मा हूँ। तब वह सौ बार यूं बोला। फिर महाराज ने पूछा कि तू कौन है? तब भी वह बोला कि मैं जमादार हूँ।

तब महाराज बोले कि-देखो जीव देह के साथ कितना जुड़ गया है। फिर बोले कि यदि आत्मा का मनन द्वारा संग किया करें तो अक्षररूप हो जाता है। सो, शिक्षापत्री में कहा है कि-'**निजात्मानं ब्रह्मरूपं**.....' यह श्लोक बोले और पुरुषोत्तमपत्री में भी कहा है कि—आत्मा को अक्षररूप माने वही सत्संगी है। और.....यह बात सिद्ध करके ही छुटकारा है। यूं आधी रात को बात करी।

प्र-6, 23

593. किसी ने प्रश्न किया कि-बड़े संत को तो जीव को भगवान में अखंड जोड़ना है। पर, किसी को अधिक आग्रह करके जोड़ते हैं और किसी से तो साधारण सी बातचीत करते हैं। तो क्या वह जीव की श्रद्धा कम है या कोई और बात है? तब स्वामी बोले कि—उसके पूर्व के संस्कार भारी हैं, सो उसे अधिक आग्रह करते हैं। बड़े संत में भगवान प्रेरक होकर उससे यूं करवाते हैं और दूसरे के संस्कार भी थोड़े और श्रद्धा भी थोड़ी ! तब पूछा कि श्रद्धा कैसे बढ़े? तब स्वामी ने कहा कि—

वह यदि यूं माने कि बड़े संत बोलते हैं वह कोई मनुष्य नहीं बोलता, पर 'भगवान बोलते हैं'-यूं माने और उस संत के प्रति ऐसी देवबुद्धि रखे व उसकी सेवा भक्ति करे, उसके पास विनय रखे, तो श्रद्धा उदय होती है। फिर वह भगवान में जुड़ता है।

प्र-6, 24

594. जीव की चार कठिनाइयाँ हमने सोच रखी हैं; उसमें
एक तो-भगवान को पुरुषोत्तम जानना,
दूसरी-साधु पहचानना
तीसरी-पंच विषय में से प्रीति हटानी,
और
चौथी-यह जीव देह से जो जुड़ गया है-देह के साथ एकरूप हो गया है। पर आत्मा को अलग समझना।
ये चार कठिनाइयाँ जबरदस्त है। इसमें दो का काम अधिक भारी है।
एक तो पंच विषय से प्रीति हटानी और दूसरी देह से जीव को पृथक जानना वह।

प्र-6, 25

595. जड़भरत का बखान किया कि अहो जड़भरत को तलवार निकालकर मारने लगे, पर वो डरे नहीं और बोले कि यदि कोई मारेंगे तो पाप टलेगा और राजा अंबरिष को इससे भी अधिक बता कर कहा कि-ऐसी आत्मनिष्ठा हो तब ठीक समझना। वर्ना ऐन मौके पर तो सारी समझदारी बाजू पर रह जाती है, वह नहीं होने देना। और.....पदार्थ व पुस्तकों के लिए झगड़ते हैं, परन्तु वह ठीक नहीं है।

प्र-6,26

✡✡✡✡✡

व्रतोत्सवसूची

(1) दि.10.12.97 बुधवार — मोक्षदा एकादशी, व्रत
(2) दि.15.12.97 सोमवार — धनारक प्रारंभ
(3) दि.25.12.97 गुरुवार — सफला एकादशी, व्रत

PUBLISHED BY PRABHAKAR RAO *FOR* YOGI DIVINE SOCIETY-DELHI
Anirdesh, Kakaji Lane, Swaminarayan Marg,
Ashok Vihar-III, Delhi-110 052 (India)
Tel.: 7229327, 7249327
Printed at : **Bharat Pakaging and Allied Industries**
C-2/12, Mayapuri Industrial Area, Phase-II, New Delhi-110 064

TO,